मुख मांहेंथी वचन कह्या तो सूं, जो हजी न छेक निकलियो तूं।
आगे किव मांडी छे अनेक, तें पण कांइक कीधी विसेक।। १६ ।।

केवल मुख से कह देने से क्या हुआ? अभी तक तूने अपनी कमियों को नहीं निकाला (अर्थात् दुनियां के देवी-देवताओं की पूजा-अर्चना या व्रत, इत्यादि कुरीतियां नहीं छोड़ीं)। आगे भी कई लोगों ने कविता की रचना कर इसे समझाया है। फिर भी तेरे लिए विशेष रूप से कुछ अधिक स्पष्ट कर दिया।

पण सांचो तो जो समझे जीव, तो वाणी भले मुखथी कही पीउ।
ए वाणी नथी कांई किवना जेम, मारा जीवने खीजवा कह्या में एम।। १७ ।।

सच्चा जीव तो वही है जो पिया के मुखारबिन्द की वाणी को समझे। यह वाणी कोई कविता नहीं है। यह तो मैंने जीव को फटकारने के लिए कही है।

जीव छे मारो अति सुजाण, ते धणीना चरण नहीं मूके निरवाण।
पण सांचो तो जो करे प्रकास, जोत जई लागी आकास।। १८ ।।

मेरा जीव तो जानकार है। वह अब धनी के चरण को निश्चित ही नहीं छोड़ेगा, पर जीव तो सच्चा तभी कहलाएगा जब इस ज्ञान की ज्योति के प्रकाश को आसमान तक पहुंचाएगा।

आंणी जोगवाईए तो एम थाय, चौद भवनमां जोत न समाय।
एम अमें न करूं तो बीजो कोण करे, धणी अमारे काजे बीजी दाण देह धरे।। १९ ।।

यह समय तो ऐसा मिला है कि चौदह लोकों में ज्ञान की रोशनी समाती नहीं। इस तरह ज्ञान का प्रकाश हम न करेंगे तो दूसरा कौन करेगा? हमारे वास्ते ही धनी ने दूसरी बार तन धारण किया है।

एणी केमे नव थाय सरम, एणी द्रष्टे केम न थाय नरम।
जीव छे मारो खरी वस्त, ते कां न करे अजवालूं अत।। २० ।।

ऐसा जानकर भी इनको शर्म क्यों नहीं आती? इनकी दृष्टि नरम क्यों नहीं होती? (अहंकार छोड़कर झुकते क्यों नहीं)। मेरा जीव सच्चा है तो वह वाणी का प्रकाश क्यों नहीं करे?

श्री सुंदरबाईने चरणज थकी, वली मोसूं गुण कीधां बाई गुणवंती।
मारे माथे दया रतनबाईनी घणी, एणी कृपाए जोपे ओलखीस धणी।। २१ ।।

श्री श्यामाजी (सुन्दरबाई) के चरणों की कृपा से और फिर मेरे ऊपर गुणवंतीबाई (गोवर्धन भाई) ने कृपा की तथा मेरे ऊपर रतनबाई (बिहारीजी) ने तो बहुत ही दया की। जिनकी कृपा से मैंने अपने धनी को पहचाना।

एहेनी दयाए जोत एम करीस, चरण धणीना चितमां धरीस।
इंद्रावती चरणे लागे आधार, सुफल फेरो करूं आवार।। २२ ।।

इनकी दया से धनी के चरण चित्त में धारण करूंगी, संसार में ज्ञान की ज्योति का प्रकाश करूंगी। इन्द्रावती धनी के चरणों में लगकर कहती है कि इस प्रकार मैं अपना आगमन सफल करूंगी।

।। प्रकरण ।। २१ ।। चौपाई ।। ५४७ ।।

हवे द्रष्ट उघाडी जो पोतानी, निरख धणो श्री धाम।
प्रेमल करी पोते आप संभारी, बांध गोली प्रेम काम।। १ ।।

अब आप अपनी दृष्टि खोलकर धाम के धनी की पहचान करो (पहचान कर देखो)। फिर इनकी पहचान करके अपने को संभालो और प्रीतम के प्रेम को हृदय में लेकर धनी से एक रस हो जाओ।

Nijanand App

प्रेमतणी गोली बांधीने, अमल करूं जोजो छाक।
चौद भवन मांहें किरण कुलांभी, फोडी जाऊं ब्रह्मांड पिउ पास।। २ ।।

प्रेम की मस्ती में डूबकर एकाकार हो जाऊं और उसकी मस्ती में मस्त हो जाऊं। चौदह लोकों में पिया के ज्ञान की किरणें फैलाकर ब्रह्माण्ड को लांघकर पिया के पास पहुंच जाऊं।

हवे वाचा मुख बोले तूं वाणी, करजे हांस विलास।
श्रवणा तुं संभार तिहारी, सुंण धणीनों प्रकास।। ३ ।।

हे मेरी जिह्वा! पिया से मीठी-मीठी बातों से दिल्लगी तथा विलास करो। अपने कानों से धनी के ज्ञान को सुनो।

जीवना अंग कहे परियाणी, तमे धणी देखाड्या जेह।
प्रले ब्रह्मांड जो थाय प्रगट, पण तोहे न मूकूं खिण एह।। ४ ।।

जीव के सब अंग सलाह कर कहते हैं कि आपने जिस धनी के दर्शन हमको कराए हैं, ब्रह्माण्ड के प्रलय होने तक भी एक पल भर भी इन्हें नहीं छोड़ेंगे।

हवे जाग जीव सावचेत थई, वालो ओलख आंख उघाड़ी।
कर अस्तुत विनती वल्लभसूं, नाख अंतर पट टाली।। ५ ।।

हे जीव! तू सतर्क होकर जाग जा और आंख खोलकर धनी को पहचान। प्रीतम से हाथ जोड़कर विनती कर और अपने तन के पर्दे को हटा।

आटला दिवस में नव ओलख्या मारा वालैया, में कीधूं अधम नूं काम।
महाचंडाल अकरमी अबूझ, में न ओलख्या धणी श्री धाम।। ६ ।।

इतने दिन तक मैंने अपने वालाजी को नहीं पहचाना। यह मैंने बहुत ही नीचता का काम किया। हे जीव ! तू महा कसाई है, कर्महीन है तथा अबूझ है, जिससे मैं धाम के धनी को नहीं पहचान सकी।

धिक धिक पडो मारा जीव अभागी, धिक धिक पडो चतुराई।
धिक धिक पडो मारा गुण सघलाने, जेणे नव जाणी मूल सगाई।। ७ ।।

मेरे अभागे जीव! तुझे धिक्कार है। चतुराई! तुझे भी धिक्कार है। मेरे सब गुणों को भी धिक्कार है, जिन्होंने मूल सम्बन्ध को नहीं पहचाना।

धिक धिक पडो ते तेज बलने, धिक धिक पडो रूप रंग।
धिक धिक पडो ते गिनानने, जेहेने नव लाधो प्रसंग।। ८ ।।

ऐसे तेज और बल, रूप और रंग तथा ज्ञान को धिक्कार है जिसने धनी से नाता नहीं जोड़ने दिया।

धिक धिक पडो मारी पांचो इन्द्री, धिक धिक पडो मारी देह।
श्री धाम धणी मूकी करी, संसारसूं कीधूं सनेह।। ९ ।।

मेरी पांचों इन्द्रियों (आंख, कान, नाक, जुबान और चमड़ी) को धिक्कार है। धिक्कार है मेरे तन को, जिसने धाम के धनी को छोड़कर संसार से प्यार किया।

Nijanand App

धिक धिक पडो मारा सर्वा अंगने, जे न आव्या धणीने काम।
में ओलखी नव बावरया, मारा धणी सुंदर श्री धाम।। १० ।।

धिक्कार है मेरे सब अंगों को जो धनी के काम न आए और पहचान करके भी मूल सम्बन्ध को न निभा सके।

तमे तमारा गुण नव मूक्यां, में कीधी घणी दुष्टाई।
हूं महा निबल अति नीच थई, पण तमे नव मूकी मूल सगाई।। ११ ।।

हे धनी! मैंने बहुत दुष्टता की, परन्तु फिर भी आपने अपनी मेहर करनी नहीं छोड़ी। मैंने बहुत ही नीचता की है, पर आपने फिर भी मूल सम्बन्ध नहीं छोड़ा।

॥ प्रकरण ॥ २२ ॥ चौपाई ॥ ५५८ ॥

हवे वारी जाऊं वनराय वल्लभनी, जेहेनी सकोमल छाया।
गुण जोजो तमे ए वन ओखदी, दीठडे दूर जाय माया।। १ ।।

अब मैं उन धनी के वृक्षों पर बलिहारी जाती हूं, जिनकी सुन्दर छाया है और जिनको देखने से माया का रोग मिट जाता है।

हवे वारणां लऊं आंगणियो वेलूं, जिहां बेसो छो संझा समे साथ।
परियाण करो धाम चालवा, घर वाटडी देखाडो प्राणनाथ।। २ ।।

उस आंगन की बलिहारी जाती हूं, जहां सायंकाल सुन्दरसाथ के बीच में धनी बैठते थे और धाम चलने की सलाह करके घर (परमधाम) का रास्ता दिखाते थे।

वली वारणा लऊं आंगणियां, अने आस पास सहु साज।
जिहां बेसो उठो ऊभा रहो, वल्लभ मारा श्री राज।। ३ ।।

फिर न्योछावर होती हूं उस आंगन पर तथा वहां पर आस-पास रखे सब सामान पर जहां हमारे प्यारे श्री धाम धनी बैठते, उठते और खड़े रहते थे।

घणी विधे हूं घोली घोली जाऊं, मंदिर ने वली द्वार।
भामणां लऊं ते भोमतणां, जिहां वसो छो मारा आधार।। ४ ।।

खास कर मैं उस मकान पर, मकान के दरवाजे पर और उस भूमि पर जहां मेरे प्रीतम रहते थे, बलिहारी जाती हूं।

वारी जाऊं पलंग पाटी ओसीसा, तलाई सिरख ओछाड।
वली वारी जाऊं चंद्रवा, जिहां पोढो सुख सेज्याए।। ५ ।।

वारी जाती हूं उस पलंग पर, निवार पर, तकिया पर, गद्दा पर, रजाई पर, पिछौरी पर, चन्दोवा पर, सेज पर, जिस पर मेरे धनी लेटते थे।

हवे घोली घोली जाऊं झीलाने चाकला, घोली जाऊं मंदिरना थंभ।
जेणे थंभे करे धणी पोताने, जुगते वाल्या बंध।। ६ ।।

वारी जाती हूं उस गलीचा पर, गद्दी पर, और मकान के थम्भों पर, जिन थम्भों के धनी ने स्वयं अपने हाथ से बन्ध बांधे थे।

Nijanand App